राष्ट्रकवि दिनकर: वो शेर जो अंग्रेजी के गलियारों में हिंदी में दहाड़ता था

रामधारी सिंह 'दिनकर' ' (23 सितम्बर 1908- 24 अप्रैल 1974) आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में याद किये जाते हैं। 'दिनकर' जी का जन्म 23 सितंबर 1908 को बिहार के बेगूसराय जिले के सिमरिया गाँव में हुआ था। उन्होंने पटना विश्वविद्यालय से इतिहास राजनीति विज्ञान में बीए किया। उन्होंने संस्कृत, बांग्ला, अंग्रेजी और उर्दू का गहन अध्ययन किया था। बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक विद्यालय में अध्यापक हो गये। १९३४ से १९४७ तक बिहार सरकार की सेवा में सब-रजिस्टार और प्रचार विभाग के उपनिदेशक पदों पर कार्य किया। १९५० से १९५२ तक मुजफ्फरपुर कालेज में हिन्दी के विभागाध्यक्ष रहे, भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति के पद पर कार्य किया और उसके बाद भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार बने। उन्हें पद्म विभूषण की उपाधि से भी अलंकृत किया गया। उनकी पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय के लिये साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा उर्वशी के लिये भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया। द्वापर युग की ऐतिहासिक घटना महाभारत पर आधारित उनके प्रबन्ध काव्य कुरुक्षेत्र को विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ काव्यों में ७४वाँ स्थान दिया गया है। 'दिनकर' स्वतन्त्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। उनकी सच लिखने की ज़िद ऐसी थी कि 1938 से 1943 के बीच अंग्रेजों की नौकरी करते हुए इन पांच वर्षों में उनके 22 तबादले हुए थे। रश्मिरथी जैसी अभूतपूर्व काव्यपाठ के बाद बाद 24 अप्रैल 1974 को दिनकर सदा के लिए अस्त हो गया।

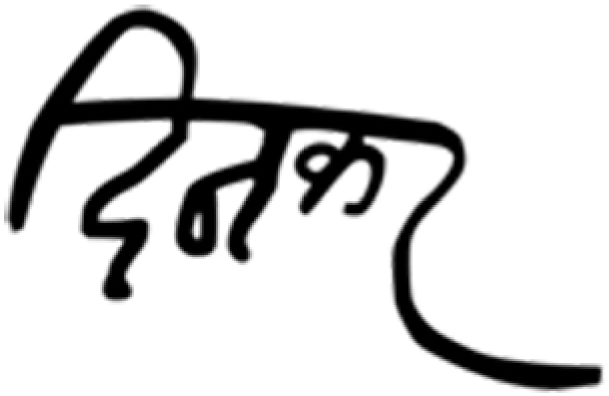

1952 में जब भारत की प्रथम संसद का निर्माण हुआ, तो उन्हें राज्यसभा का सदस्य चुना गया राज्यसभा सदस्य के तौर पर दिनकर का चुनाव पंडित नेहरु ने ही किया था, इसके बावजूद नेहरू की नीतियों की

मुखालफत करने से वे नहीं चूके। हिंदी के अपमान को लेकर वे नेहरू पर तीखी टिप्पणियाँ करने से नहीं चूकते थे।

देखने में देवता सदृश्य लगता है
बंद कमरे में बैठकर गलत हुक्म लिखता है।
जिस पापी को गुण नहीं गोत्र प्यारा हो
समझो उसी ने हमें मारा है॥

1962 में चीन से हार के बाद संसद में दिनकर ने इस कविता का पाठ किया जिससे तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू का सिर झुक गया था. यह घटना आज भी भारतीय राजनीति के इतिहास की चुनिंदा क्रांतिकारी घटनाओं में से एक है.

रे रोक युद्धिष्ठिर को न यहां जाने दे उनको स्वर्गधीर
फिरा दे हमें गांडीव गदा लौटा दे अर्जुन भीम वीर॥[

इसी प्रकार एक बार तो उन्होंने भरी राज्यसभा में नेहरू की ओर इशारा करते हुए कहा- “क्या आपने हिंदी को राष्ट्रभाषा इसलिए बनाया है, ताकि सोलह करोड़ हिंदीभाषियों को रोज अपशब्द सुनाए जा सकें ?” यह सुनकर नेहरू सहित सभा में बैठे सभी लोगसन्न रह गए थे। किस्सा 20 जून 1962 का है। उस दिन दिनकर राज्यसभा में खड़े हुए और हिंदी के अपमान को लेकर बहुत सख्त स्वर में बोले। उन्होंने कहा-

देश में जब भी हिंदी को लेकर कोई बात होती है, तो देश के नेतागण ही नहीं बल्कि कथित बुद्धिजीवी भी हिंदी वालों को अपशब्द कहे बिना आगे नहीं बढ़ते। पता नहीं इस परिपाटी का आरम्भ किसने किया है, लेकिन मेरा ख्याल है कि इस परिपाटी को प्रेरणा प्रधानमंत्री से मिली है। पता नहीं, तेरह भाषाओं की क्या किस्मत है कि प्रधानमंत्री ने उनके बारे में कभी कुछ नहीं कहा, किन्तु हिंदी के बारे में उन्होंने आज तक कोई अच्छी बात नहीं कही। मैं और मेरा देश पूछना चाहते हैं कि क्या आपने हिंदी को राष्ट्रभाषा इसलिए बनाया था ताकि सोलह करोड़ हिंदीभाषियों को रोज अपशब्द सुनाएं ? क्या आपको पता भी है कि इसका दुष्परिणाम कितना भयावह होगा ?

यह सुनकर पूरी सभा सन्न रह गई। ठसाठस भरी सभा में भी गहरा सन्नाटा छा गया। यह मुर्दा-चुप्पी तोड़ते हुए दिनकर ने फिर कहा- ‘मैं इस सभा और खासकर प्रधानमंत्री नेहरू से कहना चाहता हूं कि हिंदी की निंदा करना बंद किया जाए। हिंदी की निंदा से इस देश की आत्मा को गहरी चोट पहंचती है।’

दिनकर जी की देहावसान पर बालकवि वैरागी जी ने उनके लिए कहा था – वह मूँद गया अपनी आंखें, क्या कहते हो वह चला गया, अधघायल माता हिंदी को वह बांध हिचकियाँ रुला गया, मरता है केवल मर्त्य- मनुज वह अमर कहाँ मर सकता है, हम कांधा तुमको दे न सके, हम श्राद्ध तुम्हारा कर न सके, जो शून्य बनाया है तुमने तिल भर हम उसको भर न सके, पर संभव हो तो सुनो आज यह इस वंशज की वाणी है, संस्कार तुम्हारा बोल रहा यह गिरा अमर कल्याणी है…यह गिरा अमर कल्याणी है..!!

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा था "दिनकरजी अहिंदीभाषियों के बीच हिन्दी के सभी कवियों में सबसे ज्यादा लोकप्रिय थे और अपनी मातृभाषा से प्रेम करने वालों के प्रतीक थे।" हरिवंश राय बच्चन ने कहा था "दिनकरजी को एक नहीं, बल्कि गद्य, पद्य, भाषा और हिन्दी-सेवा के लिये अलग-अलग चार ज्ञानपीठ पुरस्कार दिये जाने चाहिये।" रामवृक्ष बेनीपुरी ने कहा था "दिनकरजी ने देश में क्रान्तिकारी आन्दोलन को स्वर दिया।" नामवर सिंह ने कहा है "दिनकरजी अपने युग के सचमुच सूर्य थे।" प्रसिद्ध साहित्यकार राजेन्द्र यादव ने कहा था कि दिनकरजी की रचनाओं ने उन्हें बहुत प्रेरित किया। प्रसिद्ध रचनाकार काशीनाथ सिंह के अनुसार 'दिनकरजी राष्ट्रवादी और साम्राज्य-विरोधी कवि थे।'

स्व दिनकरजी की यादगार कविताएँ

मेरे नगपति ! मेरे विशाल !
साकार दिव्य गौरव विराट्,
पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल !
मेरी जननी के हिम–किरीट !
मेरे भारत के दिव्य भाल !
मेरे नगपति ! मेरे विशाल !

युग–युग अजेय, निर्बन्ध मुक्त,
युग–युग शुचि, गर्वोन्नत, महान्,
निस्सीम व्योम में तान रहा
युग से किस महिमा का वितान् ?

कैसी अखण्ड यह चिर समाधि ?
यतिवर ! यह कैसा अमिट ध्यान ?
तू महा शून्य में खोज रहा
किस जटिल समस्या का निदान ?
उलझन का कैसा विषम जाल ?
मेरे नगपति ! मेरे विशाल !

ओ मौन तपस्या–लीन यती !
पलभर को तो कर दृगुन्मेष !
रे ज्वालाओं से दग्ध, विकल
है तड़प रहा पद पर स्वदेश।

कितनी मणियाँ लुट गयीं ? मिटा
कितना मेरा वैभव अशेष।
तू ध्यान–मग्न ही रहा इधर
वीरान हुआ प्यारा स्वदेश।

तू तरुण देश से पूछ अरे
गूँजा यह कैसा ध्वंस राग ?
अम्बुधि–अन्तस्तल–बीच छिपी
यह सुलग रही हे कौन आग ?

प्राची के प्रांगण–बीच देख
जल रहा स्वर्ण–युग–अग्नि–ज्वाल
तू सिंहनाद कर जाग तपी ?
मेरे नगपति ! मेरे विशाल !

रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ,
जाने दे उनको स्वर्ग धीर,
पर, फिरा हमें गाण्डीव–गदारु
लौटा दे अर्जुन–भीम वीर।

कह दे शंकर से आज करें
वह प्रलय–नृत्य फिर एक बार।
सारे भारत में गूँज उठे,
'हर–हर–बम' का फिर महोच्चार

ले अंगड़ाई, उठ, हिले धरा,
कर निज विराट् स्वर में निनाद,
तू शैलराट् ! हुँकार भरे,
फट जाए कुहा, भागे प्रमाद !

तू मौन त्याग, कर सिंहनाद,
रे तपी, आज तप का न काल।
नव–युग–शंखध्वनि जगा रही,
तू जाग जाग मेरे विशाल !

देश के किसानों की दुर्दशा पर उन्होंने लिखा था-

"जेठ हो कि हो पूस, हमारे कृषकों को आराम नहीं है
छूटे कभी संग बैलों का ऐसा कोई याम नहीं है
मुख में जीभ शक्ति भुजा में जीवन में सुख का नाम नहीं है
वसन कहाँ ? सूखी रोटी भी मिलती दोनों शाम नहीं है"

सत्ता में बैठे लोगों को वे अपनी कलिताओँ से बुरी तरह ललकारते थे
"भारत धूलों से भरा, आंसुओं से गीला,

भारत अब भी व्याकुल विपत्ति के घेरे में।
दिल्ली में तो है खूब ज्योति की चहल-पहल, पर,
भटक रहा है सारा देश अँधेरे में ”

देश के वंचित वर्ग के लिए उन्होंने लिखा-
“हटो व्योम के मेघ, पंथ से स्वर्ग लूटने हम आते हैं,
दूध-दूध ओ वत्स तुम्हारा दूध खोजने हम जाते हैं”

राष्ट्रकवि इतनें प्रखर और बेधड़क थे कि जिस पंडित नेहरू को उन्होंने ‘लोकदेव नेहरू’ का तमगा दिया, जिस नेहरू ने उन्हें 1952 से 1964 तक राज्यसभा का सदस्य बनाया, जब 1962 में नेहरू नीति की विफलता सामने आयी तो भरी संसद में दिनकर ने वहीं तीखे शब्द कहे थे।

जातिवाद को देश का सबसे बड़ा दुश्मन मानने वाले दिनकर जी ने लोकनायक जयप्रकाश नारायण के लिए लिखा है-

“है जयप्रकाश वह नाम जिसे, इतिहास समादर देता है
बढ़कर जिसके पदचिह्नों को उर पर अंकित कर लेता है”

भारत के प्रथम गणतंत्र दिवस पर उनकी लिखी पंक्तियों को राम मनोहर लोहिया ने नारा ही बना दिया था, बाद में ही कविता जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में 1974 के संपूर्ण क्रांति आंदोलन का नारा बनी।

सदियों की ठंडी-बुझी राख सुगबुगा उठी,
मिट्टी सोने का ताज पहन इठलाती है,
दो राह,समय के रथ का घर्घर-नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।‘

समर शेष है

ढीली करो धनुष की डोरी, तरकस का कस खोलो
किसने कहा, युद्ध की बेला गई, शान्ति से बोलो ?
किसने कहा, और मत बेधो हृदय वह्नि के शर से
भरो भुवन का अंग कुंकुम से, कुसुम से, केसर से ?

कुंकुम ? लेपूँ किसे ? सुनाऊँ किसको कोमल गान ?
तड़प रहा आँखों के आगे भूखा हिन्दुस्तान।

फूलों की रंगीन लहर पर ओ उतराने वाले !
ओ रेशमी नगर के वासी ! ओ छवि के मतवाले !
सकल देश में हालाहल है दिल्ली में हाला है,
दिल्ली में रौशनी शेष भारत में अंधियाला है।

मखमल के पर्दों के बाहर, फूलों के उस पार,
ज्यों का त्यों है खड़ा आज भी मरघट सा संसार।

वह संसार जहाँ पर पहुँची अब तक नहीं किरण है,
जहाँ क्षितिज है शून्य, अभी तक अंबर तिमिर-वरण है।
देख जहाँ का दृश्य आज भी अन्तस्तल हिलता है,
माँ को लज्जा वसन और शिशु को न क्षीर मिलता है।

पूज रहा है जहाँ चकित हो जन-जन देख अकाज,
सात वर्ष हो गए राह में अटका कहाँ स्वराज ?

अटका कहाँ स्वराज ? बोल दिल्ली ! तू क्या कहती है ?
तू रानी बन गयी वेदना जनता क्यों सहती है ?
सबके भाग्य दबा रक्खे हैं किसने अपने कर में ?
उतरी थी जो विभा, हुई बंदिनी, बता किस घर में ?

समर शेष है यह प्रकाश बंदीगृह से छूटेगा,
और नहीं तो तुझ पर पापिनि ! महावज्र टूटेगा।

समर शेष है इस स्वराज को सत्य बनाना होगा।
जिसका है यह न्यास, उसे सत्वर पहुँचाना होगा।
धारा के मग में अनेक पर्वत जो खड़े हुए हैं,
गंगा का पथ रोक इन्द्र के गज जो अड़े हुए हैं,

कह दो उनसे झुके अगर तो जग में यश पाएँगे,
अड़े रहे तो ऐरावत पत्तों -से बह जाएँगे।

समर शेष है जनगंगा को खुल कर लहराने दो,
शिखरों को डूबने और मुकुटों को बह जाने दो।
पथरीली, ऊँची ज़मीन है ? तो उसको तोडेंग़े।
समतल पीटे बिना समर की भूमि नहीं छोड़ेंगे।

समर शेष है, चलो ज्योतियों के बरसाते तीर,
खंड-खंड हो गिरे विषमता की काली जंज़ीर।

समर शेष है, अभी मनुज-भक्षी हुँकार रहे हैं।
गाँधी का पी रुधिर, जवाहर पर फुंकार रहे हैं।
समर शेष है, अहंकार इनका हरना बाकी है,
वृक को दंतहीन, अहि को निर्विष करना बाकी है।

समर शेष है, शपथ धर्म की लाना है वह काल
विचरें अभय देश में गांधी और जवाहर लाल।

तिमिरपुत्र ये दस्यु कहीं कोई दुष्कांड रचें ना!
सावधान, हो खड़ी देश भर में गांधी की सेना।
बलि देकर भी बली! स्नेह का यह मृदु व्रत साधो रे
मंदिर औ' मस्जिद दोनों पर एक तार बाँधो रे!

समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याघ्र,
जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध।